Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तीन पीढ़ियाँ

दोपहरी ढल चुकी थी। लाला रामनाथ बैठक में हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे। बीच-बीच में खाँसी तेज़ हो उठती थी और वे बेदम हो जाते थे। इसी समय, जब वे एक नये धसके को सँभालने में असमर्थ हो उठे थे, उनके पड़ौसी पण्डित श्रीराम उनके पास आकर बैठ गये। वे एक मन्दिर के पुजारी थे और अक्सर इनके पास आकर धर्म-चर्चा किया करते थे। लालाजी ने उन्हें देखा और खाँसते-खाँसते कहा, "आओ, आओ, पंडित-जी, बैठो।"

पंडितजी कुछ उद्विग्न थे। बोले, "कूचा जीवनराम का वह शिव-मन्दिर है न?"

"हाँ, हाँ।"

"खुल गया......।"

"खुल गया, बन्द कब था...?"

"आप समझे नहीं," उसी तरह गम्भीर स्वर में पंडितजी बोले, "अब उसमें भंगी-चमार सब जा सकेंगे।"

सहसा हुक्के की नली परे हटाकर उन्होंने पण्डितजी को देखा और अचरज से कहा, "तो खुल गया?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"हाँ ।"

"किसीने मना नहीं किया ?"

"नहीं ।"

"किसीने भी नहीं ।"

"नहीं ।"

"बहुत ख़राब बात हुई । बड़े धोखेबाज़ हैं वे लोग । तब तो लाला नारायणदत्त, हरिकिशन, धनपतराय ये सब छाती ठोककर कह रहे थे, "हमें मारकर ही वे मन्दिर में जा सकेंगे । और अब बोले भी नहीं ?"

"अजी, बोलना क्या ! उन लोगों ने बड़े समारोह से हरिजनों का मन्दिर-प्रवेश कराया है ।"

लालाजी ने हुक्के की नली को जो हटाया था उसे फिर पास नहीं खींचा । फटी-फटी आँखों से पंडितजी को देखते रहे ।

पंडितजी ने फिर कहा, "सुनते हैं, अपना मन्दिर भी खुलेगा ।"

"कौन कहता है ?"

"कौन नहीं कहता ?"

लाला रामनाथ का स्वर धीरे-धीरे तेज़ हो रहा था । चिनचिनाकर उन्होंने कहा, "नहीं, पण्डितजी ! यह नहीं खुलेगा । प्राण दे दूँगा । क्या समझा है उन्होंने ?"

पण्डितजी अब मुस्कराये, बोले, "काश ! लालाजी, हममें आपका-सा साहस होता, लेकिन अब कौन सुनता है ? समय पलट रहा है । समझ में नहीं आता भगवान् क्या चाहते हैं ? मुसलमानों ने मन्दिरों को तोड़ने का बीड़ा उठाया था, परन्तु वे तोड़ न सके । दो मन्दिर तोड़ते, परन्तु दो हज़ार बन जाते थे । उनके बाद हमारे अपने साथियों ने मूर्ति-पूजा का विरोध किया । वे थक गये, परन्तु मूर्तियाँ उसी तरह स्थिर रहीं । यही नहीं, समय आने पर इन्हीं विरोधियों ने ख़ून देकर मूर्तियों की रक्षा की । लेकिन लालाजी ! आज बात कुछ और है । आज चोर अपने दिल में पैदा हुआ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हैं। यह तो ठीक ऐसी बात है जैसे आपका बेटा, बल्कि मैं तो कहूँगा, आप स्वयं अपनी तिजोरी खोलकर चोरों से कहें, "आओ! यह रहा मेरा धन। तुम इसे चुराकर ले जा सकते हो।"

फिर लम्बी साँस लेकर ऊपर देखते हुए कहा, "न जाने भगवान् क्या चाहते हैं? वे अन्तर्यामी, परमप्रभु, चर-अचर के स्वामी, घट-घट के व्यापी हैं। उनकी माया कौन जानता है? उनकी आज्ञा के बिना पत्ता भी नहीं हिलता...।"

लाला रामनाथ ने तीव्रता से कहा, "आप कहना चाहते हैं कि यह उनकी आज्ञा है?"

पुजारीजी मुस्कराये, "जी हाँ, लालाजी! यह उनकी आज्ञा है, तभी तो यह पाप उपजा है। प्रभु बड़े विचित्र हैं। वे जब महानाश चाहते हैं तो उसका कारण पहले पैदा कर देते हैं। दुनियां समझती है, प्रभु पत्थर के हैं। पर समय आता है, जब मनुष्य पत्थर के आगे माथा झुकाकर जय-जयकार कर उठता है।"

लालाजी हतप्रभ स्तब्ध सुन रहे थे, बोले, "तो महाराज, जो कुछ हो रहा है वह उसीकी आज्ञा है?"

"जी।"

"हमें कुछ नहीं करना चाहिए?"

"करेंगे भी तो कुछ नहीं होगा।"

"दिल बैठा जा रहा है।"

"धर्मात्मा लोग धर्म पर संकट आते देखकर दुखी होते ही हैं।"

"मेरे सामने इस मन्दिर में अछूत चढ़ेंगे?"

"प्रभु यही चाहते हैं।"

"पंडितजी, हैं!" लालाजी अस्फुट तरल स्वर में बोले, "पण्डितजी, आप नहीं जानते एक दिन यहाँ कच्ची मढ़ी थी।"

"जानता हूँ लालाजी, आपने अपने प्राण खपाकर इस मन्दिर का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

निर्माण किया है। यह आपके पुत्र के समान है। वह पुत्र, जिसे माता-पिता अपने हाथों से पाल-पोसकर बड़ा करते हैं... ।"

"और पण्डितजी, आप कहते हैं, अपने हाथों माँ-बाप अपने बेटे का गला घोंट दें?"

"लालाजी, मोरध्वज ने अपने हाथ से अपने बेटे को आरे से चीर डाला था।"

"पण्डितजी... ।"

"और कोई रास्ता नहीं लालाजी! कोई रास्ता नहीं। प्रभु स्वयं चाहते हैं कि इस जाति का नाश हो।"

"क्या कहते हो पण्डितजी?"

"ठीक कहता हूँ लालाजी! भगवान् यही चाहते हैं। जैसे उन्होंने मेरे अन्तर में सांकेतिक भाषा में स्वप्न में कहा कि,

'मेरे पुजारी! उदय की तरह प्रलय भी सृष्टि का नियम है। नियम धर्म का लक्षण है, उसका पालन आवश्यक है। इसलिए आज जो कुछ हो रहा है, उससे हमें डरना नहीं चाहिए।'

यह अंतर्वाणी-सुनकर मैं प्रकाश में जैसे नहा उठा।"

लाला रामनाथ का मन और भी भारी हो उठा। उन्हें सहसा विश्वास नहीं आया। वे धीरे-धीरे खीज और क्रोध से भरने लगे। जैसे-जैसे क्रोध बढ़ता था उनकी आँखों का रंग पलटता था। वे काँपने लगे। उन्होंने हुक्के को और भी परे हटा दिया। उठ खड़े हुए। तभी पुजारी भी उठे, बोले, "अच्छा, लालाजी! वे लोग आयें तो मना मत करना।"

क्रुद्ध सन्तप्त लालाजी ने एक बार पुजारीजी को देखभर लिया, पर कुछ बोले नहीं। पुजारीजी चले गये, तो उन्होंने सामने देखा। खिड़की से मन्दिर का दरवाज़ा नज़र आ रहा था। न जाने क्या हुआ, वे वहीं रुक गये और कई क्षणतक एकटक उसे देखते रहे। देखते-देखते जो आँखें क्रोध की लाली से भरी पड़ी थीं वे बेबसी के जल से छलछला उठीं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वे आत्मविभोर होने लगे। यदि तभी अंदर से उनका छोटा पोता न आ जाता तो रो पड़ते। बच्चे के हाथ में तश्तरी थी और तश्तरी में गुलाब जामुन और मावे की बरफी। लालाजी ने तश्तरी पर एक दृष्टि डाली और हटाली।

बालक बोला, "बाबा, लो।"

"कहाँ से लाया है?"

"भाभी ने दिये हैं।"

"कहाँ से आये थे?"

"घर बनाये थे, बाबा।"

नसें ढीली पड़ीं। बाबा मुस्करा उठे। तश्तरी उन्होंने लेली। उसमें से एक बरफी उठाकर कहा, "बेटे, जा मन्दिर में रख आ।"

बालक "अच्छा" कहकर चला गया, तभी उन्हें कुछ ध्यान आया, बरफी पुजारीजी के उदर में जायगी। उन्ही पुजारीजी के, जो अभी उनसे मन्दिर खोलने की बात कह रहे थे! उन्होंने बालक को पुकारना चाहा, पर पुकार न सके। वह इसी उधेड़-बुन में थे कि बालक लौट आया। बाबा बोले, "रख आया बेटा?"

"हाँ जी।"

"कौन था वहाँ?"

"कोई नहीं बाबा। एक बिल्ली सो रही थी।"

बाबा ने सन्तोष की साँस ली। छाती पर से एक बोझ उतर गया।

—२—

लेकिन पुजारीजी ग़लत नहीं कह रहे थे। उसी रात को उनकी गली के कई प्रतिष्ठित सज्जन उनके पास आये, बोले, "लालाजी, हमने निश्चय किया है कि यह शिव-मन्दिर अछूतों के लिए खोलदें।"

लालाजी की नसें तड़कने लगीं। यदि वे कई सज्जन न होते तो शायद गाली दे बैठते, पर अब खून का घूँट पीकर उन्होंने कहा, "तो—?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"आपके सहयोग की प्रार्थना है।"

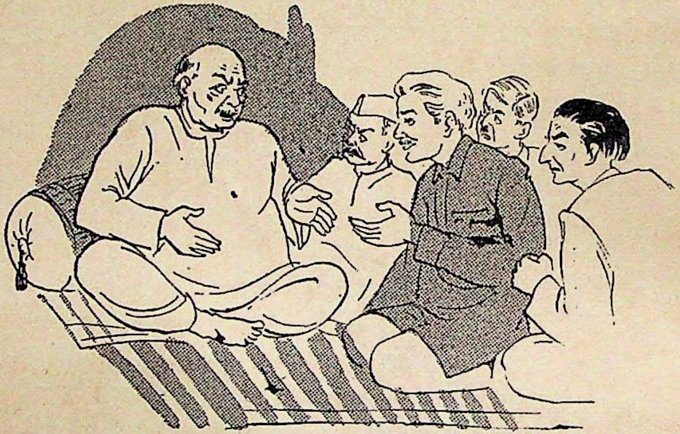

'आपके सहयोग की प्रार्थना है।'

"आप चाहते हैं, मैं अछूतों को मन्दिर में चढ़ादूँ?"

"जी हाँ।"

"यह नहीं हो सकता।"

"लालाजी——।"

"………।"

"देखिए समय पलट गया। अछूतपन अब हमारे विधान में पाप है। हमें…"

"विधान में होगा, पर यह मन्दिर राज्य का नहीं है। हमारी पंचायत का है।"

एक सज्जन सहसा क्रुद्ध हो उठे, बोले, "किसीका हो, मन्दिर खुलेगा।"

"क्या?"

"जी हाँ, मन्दिर खुलेगा।"

"देख लूँगा…।"

दूसरे सज्जन वयोवृद्ध थे। शांति से बोले, "लालाजी! आप नाराज़ न हों। हम आपके पास आये हैं। आप भक्त हैं। आपकी पूजा-निष्ठा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

की हम क़द्र करते हैं। परन्तु लालाजी! ज़माना ऐसा आ गया है कि अपनों को अपना समझना ज़रूरी है। भगवान् क्या किसीमें भेद करते हैं? वे तो घट-घटवासी हैं। मन्दिर में हैं, दिल में हैं। बात यह है, ज़र्रे-ज़र्रे में हैं। और फिर...."

लाला रामनाथ ने आँखें उठाकर इन सज्जन को देखा। भवें ढीली पड़ीं, बोले, "परन्तु आज सोचो तो भगवान् की प्रतिमा को कैसे अपवित्र किया जा सकता है?"

"अपवित्र कौन करना चाहेगा? भक्तों के दरस-परस से भगवान् अपवित्र थोड़े ही होते हैं!" उन सज्जन ने कहा।

लालाजी मन्दिर-प्रवेश की स्वीकृति देने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। उन्होंने कहा, "आप जो चाहें करें; मैं आपको नहीं रोकूँगा। पर मैं आज से मन्दिर में पैर भी नहीं रखूँगा।"

और यह कहकर वे भावावेश में काँपने लगे। वयोवृद्ध सज्जन उसी विनम्रता से बोले, "यह आपने क्या कहा लालाजी? आप नहीं आयेंगे तो कौन आयेगा? मन्दिर आपका है, आपने उसे बनाया है।"

"बनाया है।" लाला रामनाथ का स्वर भर्रा उठा, बोले, "बेटा भी तो कपूत निकल जाता है। कुल की आन के लिए जिस प्रकार माँ-बाप कपूत बेटे का त्याग कर देते हैं, उसी प्रकार मैंने आज से इस मन्दिर का त्याग कर दिया, मैं फिर इसमें नहीं जा सकूँगा...."

और फिर वह आगे बोलने में असमर्थ चुपचाप धोती से आँसू पोछने लगे। आगन्तुकों ने एक बार एक दूसरे को देखा, फिर उठे और जैरामजी करके चलने को मुड़े, फिर ठिठके,—देखा, आँखों में आँसू इस प्रकार उमड़ रहे हैं जिस प्रकार सावन के बादलों से बूँदें उमड़ती हैं, और उन्हें रोकने में असमर्थ वे क्रोध से थर-थर काँप रहे हैं। दुःख उन लोगों को भी हुआ, परन्तु वे समय को पहचानते थे, इसलिए वे उनके आँसू पोंछने को नहीं रुके।

—३—

अगले सप्ताह में होनेवाले मन्दिर-प्रवेश-उत्सव में उन लोगों ने कोई

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कसर न उठा रखी। गली के दरवाज़े पर उन्होंने कदली और फूलों से बहुत सुन्दर और कलापूर्ण तोरण बनवाया। आगे के मार्ग पर नाना वर्ण, रूप और गंध के मंदिरतक इसी प्रकार के आठ कलापूर्ण द्वार बने थे और प्रत्येक द्वार पर स्वागत-समादर का विशेष प्रबन्ध था।

"हम आप लोगों का स्वागत करते हैं। आप हमारे हैं, हम आपके हैं। भेद की लकीर आज मिट चुकी है। आप हमें रास्ता दिखलाएँ। हम आपके पीछे चलें।" और तब उन्हें आगे करके अपार जनसमूह जय के नारों से धरती और आकाश को कँपाता हुआ मंदिर में प्रवेश करने लगा। प्रतिमा के पास पुजारी ने उनका स्वागत किया और विधिपूर्वक पूजा करने के पश्चात् प्रसाद प्रदान किया। उसे ग्रहण करते हुए हरिजनों के मुखिया-ने कहा, "आज मुझसे बढ़कर आपकी खुशी का दिन है। सच तो यह है कि आज आपके पुनर्जन्म का दिन है। आपने अपने भाइयों में अपनेको ढूँढा है। आपने आज शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक सभी प्रकार की शक्ति प्राप्त की है। आपकी जय हो।"

और मंदिर फिर कालभैरव की जय-जयकार से गुंजायमान हो उठा। मंदिर गूँज-गूँज उठा और मंदिर के साथ-साथ सारा वातावरण गूँज उठा। लाला रामनाथ का मकान सामने ही था। वह सवेरे से ही पागलों की तरह बड़बड़ा रहे थे। उनकी पत्नी मर चुकी थी। बहू-बेटों से वह आज़ादी से बातें नहीं कर सकते थे, इसलिए अन्दर-अन्दर कोयले की तरह सुलग रहे थे। उन्होंने जब अपार जनसमूह को समुद्र की तरह लहराते और गरजते देखा तो लगा, अब प्रलय होनेवाली है, परन्तु धरती उसी तरह स्थिर थी, आकाश उसी तरह नीला था और सूर्य उसी तरह तप्तवर्ण थे, तो....

"प्रभु . प्रभु ..।" वे फुसफुसाये और नीचे जननाद की तीव्र ध्वनि ने उन्हें फिर कँपा दिया। उन्होंने कानों में उँगलियाँ देलीं। वे अन्दर के कमरे में जा बैठे। नाद अबभी गूँज रहा था। उन्होंने किवाड़ बंद कर लिये, पर गूँज अबभी समुद्र की घनीभूत जलराशि की तरह हिलोरें मार रही थी। उनका दिल बैठने लगा। उन्होंने आँखें मींचलीं। लगा, जैसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

धरती फटने लगी है और वे डूबने लगे हैं। वे सचमुच डूबने लगे, आँखें मिच गईं। अंधकार छा गया। गूँज धीमी और धीमी पड़ गई, और...।

और यहीं आकर जैसे उन्हें किसीने झकझोर डाला। सुना, कोई बड़े ज़ोर से हँस रहा था और वह आवाज़...वे उसको पहचानते थे। वह उनकी अपनी, अपने बेटों की, आवाज़ थी। पर उनकी मरणवेला में वे हँस क्यों रहे थे...

उन्होंने दरवाज़ा खोलकर नीचे झाँका ; देखा, उनके दोनों पोतों के गले में फूलमालाएँ पड़ी हुई हैं। उनके हाथों में मिठाई के दोने हैं और

देखा, उनके दोनों पोतों के गले में फूलमालाएँ पड़ी हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वे प्रफुल्लित होकर हँस रहे हैं। लालाजी के बदन में जैसे आग जल उठी। उनका रोम-रोम झुलसने लगा। वे तीव्रता से फुंकारते हुए आगे बढ़े कि उनके गले की मालाएँ तोड़ डालें, मिठाई को पैरों से रौंद दें और फिर ज़ोर से गाल पर तमाचा जड़ते हुए कहें, "हरामज़ादो, मेरे रहते मेरे घर में तुम्हें यह भ्रष्टाचार करने का साहस कैसे हुआ?"...

न जाने तभी क्या हुआ। एकबारगी उनका शरीर झनझना उठा। वे ठिठक गये। दो युवकों के बातें करने का तीव्र स्वर बहुत पास से आ रहा था। एक ने कहा, "ये लोग इसे क्रांति कहते हैं! कठघरा लगाकर मंदिर-प्रवेश कराने का यह उपक्रम एक ढोंग है, पाखण्ड है। क्रांति तब होगी जब इस पाखण्ड का पूरी तरह नाश हो चुकेगा। जब कोई न बड़ा होगा न छोटा, ब्राह्मण होगा न शूद्र? जब सच मनुष्य होंगे।"

जैसे भूकम्प आ गया, जैसे लालाजी के कानों में किसीने शीशा भर दिया हो। वह आँखें फाड़-फाड़कर शून्य में ताकने लगे, पर दृष्टि कहीं जमती नहीं, थी। रह-रहकर उनके सामने दो मूर्तियाँ आ खड़ी होती थीं। उनके दोनों जवान पोतों की मूर्तियाँ थीं—नहीं-नहीं, वह उनकी अपनी मूर्तियाँ थीं। अपने यौवन की वे ही आँखें थीं, पर वे कुछ और दीख रही थीं; वही मुख था, पर वह कुछ और बोल रहा था; वही दिल था, पर वह कुछ और समझ रहा था; वही मस्तिष्क था, पर वह कुछ और सोच रहा था—"प्रभु, प्रभु! यह क्या? मैं स्वयं मंदिर के नाश की बात कह रहा हूँ। मैं स्वयं जाति-पांति को मिटाने की बात कहता हूँ। मैं? हाँ, मैं, वह मेरा रक्त है, मेरा।"

वह काँपे, लड़खड़ाये और चक्कर खाकर वहीं गिर पड़े।

एक धमाका हुआ। उनके बड़े पोते ने सहसा आगे बढ़कर कहा, "बाबा!"

छोटा चिल्लाया, "पिताजी, अम्मा! दौड़ो, बाबा को गश आ गया है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नीचे से दौड़ते-दौड़ते चाचा घबराये-से बोले, "बड़ी जल्दी-जल्दी दौरे पड़ने लगे हैं इन्हें। रमेश बेटा, पानी के छींटे दो। और सुरेश, दौड़कर डाक्टर को तो बुलालो। आखिर इनका इलाज होना चाहिए।"

"इनका इलाज" बड़े बेटे ने उन्हें सँभालते हुए कहा, "इनका इलाज तो अब भगवान् ही करेंगे।"

—विष्णु प्रभाकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ठाकुर का कुआँ

जोखू ने लोटा मुहँ से लगाया तो पानी से सख्त बदबू आयी। गंगी से बोला – "यह कैसा पानी है ? मारे बास के पिया नहीं जाता। गला सूखा जा रहा है। और तू सड़ा हुआ पानी पिलाये देती है !"

'और तू सड़ा हुआ पानी पिलाये देती है !'

गंगी प्रतिदिन शाम को पानी भर लिया करती थी। कुआँ दूर था ; बार-बार जाना मुश्किल था। कल वह पानी लायी, तो उसमें बू बिल्कुल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

न थी, आज पानी में बदबू कैसी ? लोटा नाक से लगाया, तो सचमुच बदबू थी। ज़रूर कोई जानवर कुएँ में गिरकर मर गया होगा; मगर दूसरा पानी आये कहाँ से ?

ठाकुर के कुएँ पर कौन चढ़ने देगा ? दूर ही से लोग डाँट बतायेंगे। साहू का कुआँ गाँव के उस सिरे पर है; परन्तु वहाँ भी कौन पानी भरने देगा ? चौथा कुआँ गाँव में है नहीं।

जोखू कई दिन से बीमार है। कुछ देरतक तो प्यास रोके चुप पड़ा रहा, फिर बोला—"अब तो मारे प्यास के रहा नहीं जाता। ला, थोड़ा पानी नाक बन्द करके पीलूँ।"

गंगी ने पानी न दिया। खराब पानी पीने से बीमारी बढ़ जायेगी, इतना जानती थी; परन्तु यह न जानती थी कि पानी को उबाल देने से उसकी खराबी जाती रहती है। बोली—"यह पानी कैसे पियोगे ? न जाने कौन जानवर मरा है। कुएँ से मैं दूसरा पानी लाये देती हूँ।"

जोखू ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा—"दूसरा पानी कहाँ से लायेगी ?"

"ठाकुर और साहू के दो कुएँ तो हैं। क्या एक लोटा पानी न भरने देंगे ?"

"हाथ-पाँव तुड़वा आयेगी और कुछ न होगा, बैठ चुपके से। ब्राह्मण देवता आशीर्वाद देंगे, ठाकुर लाठी मारेंगे, साहूजी एक के पाँच लेंगे। ग़रीबों का दर्द कौन समझता है ? हम तो मर भी जाते हैं, तो कोई द्वार पर झाँकने नहीं आता, कंधा देना तो बड़ी बात है। ऐसे लोग कुएँ से पानी भरने देंगे ?"

इन शब्दों में कड़वा सत्य था। गंगी क्या जवाब देती; किन्तु उसने वह बदबूदार पानी पीने को न दिया।

—२—

रात के नौ बजे थे। थके-माँदे मज़दूर सो चुके थे। ठाकुर के दरवाज़े

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर दस-पाँच बे-फ़िक्रे जमा थे। मैदानी बहादुरी का तो न अब ज़माना रहा है, न मौका ; क़ानूनी बहादुरी की बातें हो रही थीं।

इसी समय गंगी कुएँ से पानी लेने पहुँची।

कुप्पी की धुँधली रोशनी कुएँ पर आ रही थी। गंगी जगत की आड़ में बैठी मौक़े का इन्तज़ार करने लगी। इस कुएँ का पानी सारा गाँव पीता है। किसीके लिए रोक नहीं, सिर्फ़ ये बदनसीब नहीं भर सकते।

गंगी का विद्रोही दिल रिवाजी पाबंदियों और मज़बूरियों पर चोटें करने लगा—हम क्यों नीच हैं और ये लोग क्यों ऊँचे हैं ? इसलिए कि ये लोग गले में तागा डालते हैं ? यहाँ तो जितने हैं, एक-से-एक छँटे हैं। चोरी ये करें, जाल-फ़रेब ये करें, झूठे मुकद्दमे ये करें। अभी इसी ठाकुर ने उस दिन बेचारे गड़रिये की एक भेड़ चुराली थी और बाद को मारकर खा गया। इन्हीं पण्डितजी के घर तो बारहों मास जुआ होता है। यही साहूजी तो घी में तेल मिलाकर बेचते हैं। काम करा लेते हैं, मज़दूरी देते नानी मरती है। किस बात में हैं हमसे ऊँचे ? हाँ, मुहँ में हमसे ऊँचे हैं। हम गली-गली चिल्लाते नहीं कि 'हम ऊँचे हैं, हम ऊँचे हैं।' कभी गाँव में आ जाती हूँ, तो रसभरी आँखों से देखने लगते हैं, जैसे सबकी छाती पर साँप लोटने लगता है, परन्तु घमण्ड यह कि हम ऊँचे हैं !

कुएँ पर किसीके आने की आहट हुई। गंगी की छाती धक्-धक् करने लगी। कहीं देखलें तो गजब हो जाये। एक लात भी तो नीचे न पड़े। उसने घड़ा और रस्सी उठाली और झुककर चलती हुई एक वृक्ष के अँधेरे साये में जा खड़ी हुई। कब इन लोगों को दया आती है किसी-पर ? बेचारे महँगू को इतना मारा कि महीनों लोहू थूकता रहा। इसीलिए तो कि उसने बेगार न दी थी। उसपर ये लोग ऊँचे बनते हैं !

कुएँ पर दो स्त्रियाँ पानी भरने आयी थीं। इनमें बातें हो रही थीं—"खाना खाने चले, और हुक्म हुआ कि ताज़ा पानी भरलाओ। घड़े के लिए पैसे नहीं हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"हम लोगों को आराम से बैठे देखकर जैसे मरदों को जलन होती है।"

"हाँ, यह तो न हुआ कि कलसिया उठाकर भर लाते। बस, हुकम चला दिया कि ताज़ा पानी लाओ, जैसे हम लौंडियाँ ही तो हैं।"

"लौंडियाँ नहीं तो और क्या हो तुम? रोटी-कपड़ा नहीं पातीं? दस-पाँच रुपये भी छीन-झपटकर ले ही लेती हो। और लौंडियाँ कैसी होती हैं?"

"मत जलाओ, दीदी! दिनभर आराम करने को जी तरसकर रह जाता है। इतना काम तो किसी दूसरे के घर कर देती, तो इससे कहीं आराम से रहती। ऊपर से वह एहसान मानता। यहाँ काम करते-करते मर जाओ; पर किसीका मुहँ ही नहीं सीधा होता।"

दोनों पानी भरकर चली गईं, तो गंगी वृक्ष की छाया से निकली और कुएँ के जगत के पास आयी। बे-फिक्रे चले गये थे। ठाकुर भी दरवाज़ा बन्दकर आँगन में सोने जा रहा था। गंगी ने क्षणिक सुख का साँस लिया। किसी तरह मैदान तो साफ़ हुआ। अमृत चुरा लाने के लिए जो राजकुमार किसी ज़माने में गया था, वह भी शायद इतनी सावधानता के साथ और समझ-बूझकर न गया होगा। गंगी दबे पाँव कुएँ के जगत पर चढ़ी। विजय का ऐसा अनुभव उसे पहले कभी न हुआ था।

उसने रस्सी का फन्दा घड़े में डाला। दायें-बायें चौकन्नी दृष्टि से देखा, जैसे कोई सिपाही रात को शत्रु के क़िले में सूराख कर रहा हो। अगर इस समय वह पकड़ भी गई, तो फिर उसके लिए माफ़ी या रिआ-यत की रत्तीभर उमीद नहीं। अन्तमें देवताओं को याद करके उसने कलेजा किया और घड़ा कुएँ में डाल दिया।

घड़े ने पानी में गोता लगाया, बहुत ही आहिस्ता। ज़रा भी आवाज़ न हुई। गंगी ने दो-चार हाथ जल्दी-जल्दी मारे। घड़ा मुहँ के मुहँतक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आ पहुँचा। कोई बड़ा शहज़ोर पहलवान भी इतनी तेज़ी से उसे न खींच सकता था।

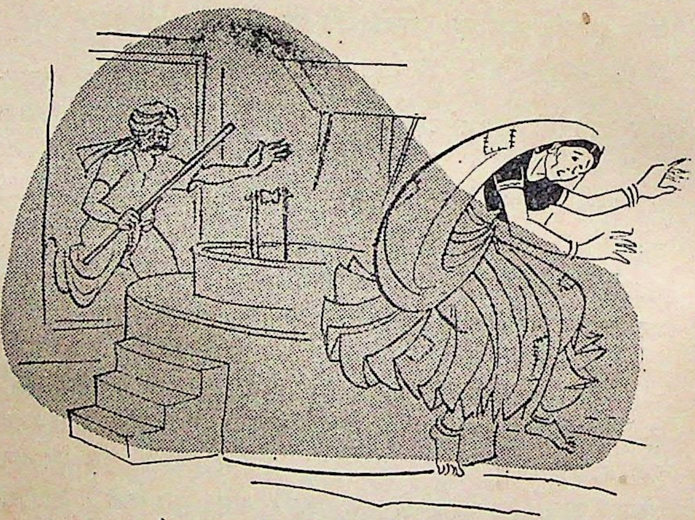

और गंगी जगत से कूदकर भागी जा रही थी।

गंगी झुकी कि घड़े को पकड़कर जगत पर रखे कि एकाएक ठाकुर साहब का दरवाज़ा खुल गया। शेर का भी मुहँ उससे अधिक भयानक न होगा।

गंगी के हाथ से रस्सी छूट गयी। साथ ही, घड़ा पानी में धड़ाम से गिरा और कई चणतक पानी में हलकोरे की आवाज़ सुनाई देती रही।

ठाकुर 'कौन है? कौन है?' पुकारते हुए कुएँ की तरफ़ आ रहे थे और गंगी जगत से कूदकर भागी जा रही थी।

घर पहुँचकर देखा कि जोखू लोटा मुहँ से लगाये वही मैला, गन्दा पानी पी रहा है!

—प्रेमचन्द

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पावसेर आटा

सुजानगंज क़स्बे के दक्खिनी छोर पर जो चमारों व धानकों की बस्ती हैं, उसीका यह क़िस्सा है। कोई अस्सी-नब्बे झोंपड़े हैं इस बस्ती में; कुछ पर तो फूस के छप्पर हैं और कुछ पर खपरैल के। बस्ती के ठीक मुहँ पर एक खुली गटर दुर्गन्ध मार रही है, और उसमें कीड़े बिलबिला रहे हैं। पास ही कूड़े-कचरे के दो-तीन घूर लगे हुए हैं। और कुत्तों ने जहाँ-तहाँ हड्डियाँ ला-लाकर बिखेरदी हैं। बस्ती का कुआँ अन्दर से खोखला हो गया है,और पानी उसका सड़ रहा है। उसी बदबूदार पानी को बस्ती के लोग पीते हैं।

रामाधीन धानक इसी मोहल्ले में रहता है, एक फूस के गिरे-पड़े झोंपड़े में। उम्र कोई ३५ साल की हैं। बूढ़ी माँ उसकी अन्धी है। तीन बच्चे हैं। बड़ा लड़का १० साल का, और दो छोटी-छोटी लड़कियाँ। रामाधीन दो-तीन महीने से बीमार है। एक वैद्य से इलाज कराया, दवा-दारू पर जो कुछ घर में था सब फूँक दिया, बीस रुपये का कर्ज़ भी सिर पर चढ़ गया, पर फ़ायदा नहीं हुआ। रोज़ हल्का-हल्का बुखार रहता है और खाँसी ऐसी कि दम नहीं लेने देती। वैद्य ने दूध पीने को बतलाया है, पर दूध आये कहाँ से? रामाधीन की औरत सुखदेई रोज़ चार आने के पैसे मेहनत-मजूरी करके ले आती है और उसीसे किसी तरह अपनी अन्धी सास का और तीनों बच्चों का पेट पालती है।

—२—

बाज़ार में आटे की एक चक्की है बंसीधर पण्डित की। नई-नई अभी खुली है। सुबह से शामतक भक्-भक् करती हुई मनों अनाज मिनिटों में पीस देती है। औरतों ने हाथ से पीसना छोड़ दिया है। अनाज की गठरियाँ सिर पर लादे घंटों लोग खड़े रहते हैं। जब बारी आती तब आटा उनका पिसता है। चक्की पर भारी भीड़ लगी रहती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

एक दिन सुखदेई धानकिन ने जाकर बंसी पण्डित के पैर पकड़ लिये, और रो-रोकर अपनी सारी व्यथा कह सुनाई। सुखदेई के हाल पर उन्हें दया आ गई, और उसके लड़के ननकू को चक्की के काम पर रख लिया। सारे दिन की मजूरी में आधा सेर आटा उसे रोज़ मिलने लगा जौ-चने का या ज्वार-मक्के का।

रोज़ की मजूरी में आध सेर आटे की बढ़ोतरी देखकर सुखदेई को तो थोड़ी-सी राहत मिली, पर रामाधीन को नहीं। ननकू के ये दिन पढ़ने के हैं। मैं इस तरह बीमार न पड़ा होता, तो मेरे फूल-से बच्चे को आज चक्की पर इस तरह न पिसना पड़ता। मेरा ननकू भी आज स्कूल में पढ़ता होता। उसकी धँसी हुई आँखों में आँसू भर आये।

शाम का वक्त था, और जाड़े के दिन। चक्कीघर से आटा पिसाकर लोग अपने-अपने घर अँधेरा पड़ने से पहले ही चले गये थे। ननकू भी मजूरी का आधा सेर आटा अँगोछे में बाँधकर घर जा ही रहा था कि कुछ सोच-विचार में पड़ गया। बाप तो कई दिनों से मौत की बाट जोह ही रहा था, माँ भी उसकी दस-बारह दिनों से खाट पर पड़ी है। इस आध सेर आटे से ही अब किसी तरह घर का काम चलता है। सब अधपेट रहते हैं। अन्धी दादी ने तो दो दिन से एक टुकड़ा भी मुँह में नहीं डाला। ननकू की एक बहिन भी कल रात को भूखी ही सो गई थी।

ननकू ने सोचा कि उसके सामने आटे की जो एक भरी बोरी रखी है, उसमें से और दो मुट्ठी आटा अपने अँगोछे में बाँधले, तो आज उसकी दादी और बहिन के पेट में एक-एक रोटी और पड़ जायेगी। पर यह तो चोरी होगी। यह तो पाप है। हो पाप, पर अन्धी भूखी दादी को और अपनी छोटी-छोटी बहिनों को भूख से कलपते देखना भी तो महापाप है। आटा निकाल लेने को हाथ बढ़ाया, पर फिर पीछे हट गया। उसके मन में इसी तरह यह द्वन्द्व पाँच-सात मिनिटतक चलता रहा। अन्तमें, भूख से तड़पती छोटी-छोटी बहिनों और अन्धी दादी के करुण दृश्य ने पाप

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

की कल्पना को ओझल कर दिया, और ननकू ने काँपते हुए हाथों से दो मुट्ठी आटा निकालकर अँगोछे में बाँध लिया। चक्कीघर से अँधेरे में इधर-

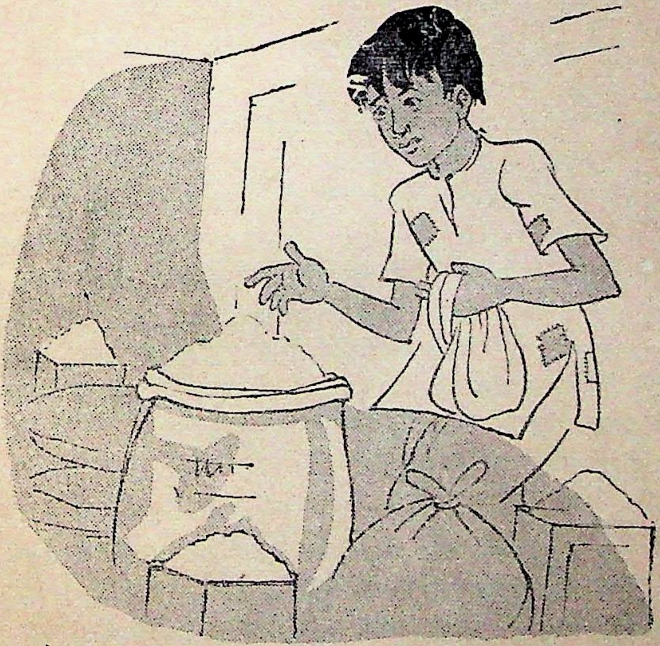

दो मुट्ठी आटा निकालकर अँगोछे में बाँध लिया।

उधर ताकता हुआ ननकू तीर की तरह निकल गया। तीन पाव आटे की रोटियाँ बहिन-भाई ने मिलकर पकायीं। सबके खाली पेटों में आज कई दिनों बाद ये दो-दो, तीन-तीन रोटियाँ पड़ीं। बच्चियाँ दोनों खुश थीं। दौड़कर बीमार माँ से लिपट गईं—'ननकू भैया आज आटा कुछ ज्यादा लाये थे माँ, हम सबने खूब पेट भरकर खाया।'

रामाधीन ने ननकू के सिरपर हाथ फेरते हुए पूछा,—'क्या आज बंसी दादा ने, बेटा, मजूरी तेरी कुछ बढ़ादी है?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'नहीं काका, मैं ही आज दो मुट्ठी आटा ज़्यादा ले आया था' डरते-डरते ननकू ने कहा।

'तो क्या चुराकर ?'

'हाँ, काका, उन सबकी आँख बचाकर। बहिनों और दादी का भूखों मरना मुझसे देखा नहीं गया।'

'बेटा, तो तूने यह अच्छा नहीं किया। यह तो चोरी है, पाप है। दुनियाँ की नज़रों में हम भले ही ग़रीब मज़दूर हों, पर अपने में हम ग़रीब नहीं हैं। ईमान-धरम हमें जो बाप-दादों से विरासत में मिला है, वह हमारा सबसे बड़ा धन है। उसे हाथ से गँवाकर हम कहीं के नहीं रहेंगे। चोरी-लबारी जैसे नीच करमों को हम भूल से भी करनेवाले नहीं। ननकू, बन्सी दादा के सामने जाकर कल तू अपनी यह चोरी खुद कबूल कर लेना, और पावसेर के बदले अपनी दिनभर की मजूरी का आधा सेर आटा उनके पैरों पर रख देना। कान पकड़, बेटा, आज से अब कभी ऐसा बुरा काम मत करना।' रामाधीन ने मैले-फटे चदरे से आँसू पोछते हुए ननकू से कहा।

—३—

'दादाजी, आज मैं आटा नहीं लूँगा, मुझसे कल क़सूर हो गया'—बन्सीधर पण्डित से ननकू ने हाथ जोड़कर कहा।

'क्यों रे ननकू, क्या तू अपनी मजूरी बढ़वाना चाहता है ? और, क़सूर कैसा रे ?'

'दादाजी, कल मैं चक्कीघर से पावसेर आटा चुराकर ले गया था। अपनी अन्धी दादी और छोटी-छोटी बहिनों को जब भूखों मरते नहीं देखा गया मुझसे, तब मैंने.....' और वह रो पड़ा।

बन्सीधर पण्डित उसकी ओर देखते ही रह गये। वे अवाक् थे। कैसा फूल-सा भोला और प्रकाश-सा सच्चा लड़का है ! और इसके ग़रीब माँ-बाप भी ! वे ग़रीब धानक ! और एक मैं हूँ। आटा कम तोल-तोलकर पिसानेवालों को रोज़ ही देता हूँ। और ऊपर से उनके गेहूँ में जौ और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ज्वार मिला देता हूँ ! मन में कभी लगता भी नहीं कि मैं चोरी कर रहा हूँ। और फिर हम अपने आपको ऊँचा कहते हैं और दूसरों से भी कहलाते हैं ! नीच कर्म करनेवाले हम ऊँचे कैसे ?

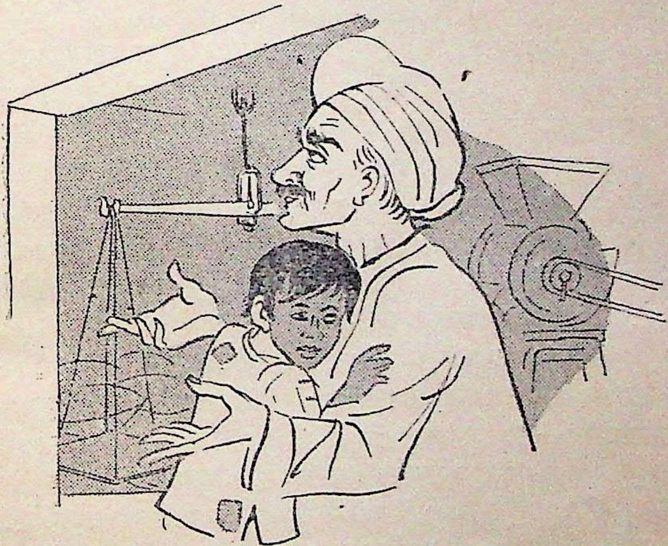

'बेटा, तूने मुझे पाप की राह से लौटा लिया।'

वन्सीधर ने ननकू को छाती से लगा लिया। स्नेह के आँसू भरकर कहा, 'बेटा, तूने मुझे पाप की राह से लौटा लिया। मैंने यह आज ही जाना कि भगवान् का वास असल में कहाँ है।'

—वि० ह०

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चाण्डाल कौन ?

एक था ब्राह्मण, जो कितने ही वर्षों से कठोर तप कर रहा था। घोर तप करते-करते वह अपने आपको अत्यंत पवित्रात्मा समझने लगा। वह अब जनसाधारण से अलग रहता था। अपने सिवाय हर किसीको वह अपवित्र समझता था। उसका विश्वास था कि दूसरों के स्पर्श से, यहाँतक कि दूसरों के दूर के संपर्क से भी वह अपवित्र हो जायगा। वह मानता था कि त्रिकाल-स्नान से, अपना भोजन खुद अपने हाथ से बनाने से, नित्य घंटों नेत्र मूँदे मंत्रों के जप से, और सबसे अलग और बच-बचकर रहने से ही वह श्रेष्ठ और पवित्रात्मा बन गया है।

किन्तु हृदय उसका एकदम शून्य था। उसके अंदर न तो प्रेम की चिनगारी थी, और न करुणा का एक कण। अंतर उसका एक अँधेरी गुफा के समान था,— छूछा और नीरस। वहाँ न तो सूर्य का सुखद प्रकाश पहुँच पाता था और न स्वच्छता का संचार करनेवाला वायु ही।

अपनी अकेली कुटिया के पास वह किसीको इसलिए नहीं फटकने देता था कि कहीं उस आगन्तुक की छाया पड़ जाने से वह अपवित्र न हो जाये।

उस तपस्वी ब्राह्मण की इच्छा के विरुद्ध यदि कोई बात हो जाती, तो उसके लिए अपने प्रचण्ड क्रोध का दबाना अत्यन्त कठिन हो जाता था।

—२—

कुछ दिनों बाद संयोग से उसके पड़ोस में एक धोबी आकर रहने लगा। धोबी को पता भी न था कि उसके पड़ोस में एक एकान्तवासी तपस्वी रहता है।

एक दिन धोबी उस नाले पर कपड़े धो रहा था, जहाँ वृक्षों की ओट में नेत्र मूँदे ध्यानावस्थित वृद्ध ब्राह्मण मंत्र जप रहा था। धोबी पास ही एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पत्थर पर कपड़े पछाड़ने लगा कि एक छींटा तपस्वी पर जा पड़ा। आँखें खोलकर उसने देखा—एक धोबी का, एक अछूत चाण्डाल का इतना साहस, जो उसके पवित्र आश्रमतक चला आया, और पछाड़-पछाड़कर गन्दे कपड़ों को धो रहा है ! तपस्वी के प्रचण्ड क्रोध का पार न रहा। धोबी पर वह बुरी तरह जा झपटा, और जबतक थक न गया उसे निर्दयता से पीटता रहा। मगर धोबी चुपचाप शांत खड़ा रहा। पर यह देखकर कि आक्रमणकारी एक तपस्वी ब्राह्मण है, उसने अस्पष्ट स्वर में उससे केवल इतना ही पूछा—"स्वामी, दास से ऐसा क्या अपराध हो गया, जो उसे आपका कोपभाजन बनना पड़ा ?"

तपस्वी ने और भी उत्तेजित होकर, बुरी बुरी गालियाँ देते हुए, उसे डाँटा—"अरे नीच, मेरे आश्रम के निकट आने और उसे अपवित्र करने का यह साहस तूने किया कैसे ?"

धोबी को पता नहीं था कि वह 'वर्जित' स्थान है, और वह क्षमा माँगकर वहाँ से हट गया।

—३—

तपस्वी को अब याद आया कि एक अस्पृश्य के संसर्ग में आने से वह अपवित्र हो गया है, इसलिए नहा-धोकर शरीर को शुद्ध करना आवश्यक है। और उसने उस नाले में उसी क्षण नहाकर अपनी अपवित्रता दूर करदी।

और धोबीने भी मय वस्त्रों के स्नान किया। तपस्वी उसके स्नान करने का मतलब न समझ सका। धोबी से उसके स्नान करने का कारण उसने पूछा। उत्तर मिला—

"महाराज, जो आपके स्नान करने का कारण है वही मेरा भी है।"

"मैंने तो इसलिए मय वस्त्र के स्नान किया कि तुझ अस्पृश्य चाण्डाल को छूकर मैंने अपने आपको अपवित्र कर लिया था। पर तूने क्यों स्नान

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

क्या रे ? मुझ जैसे तपस्वी ब्राह्मण के पवित्र स्पर्श से तू अपवित्र थोड़े ही हो सकता था ?" आश्चर्य-चकित ब्राह्मणने कहा ।

"आपने मुझे छू लिया था न ! क्रोध से आक्रान्त और अन्धे होकर आप अपने को भूल गये और मुझे निर्दयतापूर्वक आपने पीटा । आपके अंतर का यह क्रोध कितना निन्द्य है, कितना अपवित्र और अस्पृश्य है । आपने ऐसी अपवित्र वस्तु का संसर्ग किया कि आपके स्पर्श से मैं भी अपवित्र हो गया, इसलिए मुझे स्नान करना पड़ा ।" धोबीने बड़ी नम्रता से उत्तर दिया ।

ब्राह्मण की आँखों पर जो परदा पड़ा हुआ था वह हट गया । विचार में वह अन्दर-अन्दर डूब गया । धोबी के इस उत्तरने उसे उस निर्मल ज्ञान का साक्षात्कार करा दिया, जो उसका वर्षों का घोर तप और वैदिक कर्मकाण्ड न करासका था । अपनी ऊँची विद्वत्ता और पवित्रता पर घमंड करने-वाला वह तपस्वी ब्राह्मण, किन्तु अदम्य क्रोध का दास, अब अपने आपको तुलना उस अनपढ़ धोबी से करने लगा, जो भारी-से-भारी उत्तेजना के सामने भी शांत और स्थिर बना रहा ।

तपस्वी हैरान था कि ज्ञान और आचरण में वह धोबी उससे कितना श्रेष्ठ है !

उन दोनों में वास्तविक अस्पृश्य चाण्डाल कौन था ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मुझे मत छुओ, माँ ?

बच्चा—भंगी को हम क्यों नहीं छू सकते ?

माता—क्योंकि वह मैला उठाता है।

बच्चा—मगर, बच्चे का मैला क्या तुम नहीं उठाती हो माँ ?

माता—हाँ ठीक है ; पर वह भंगी है, मैं तो भंगिन हूँ नहीं।

बच्चा—भंगी किसे कहते हैं, माँ ?

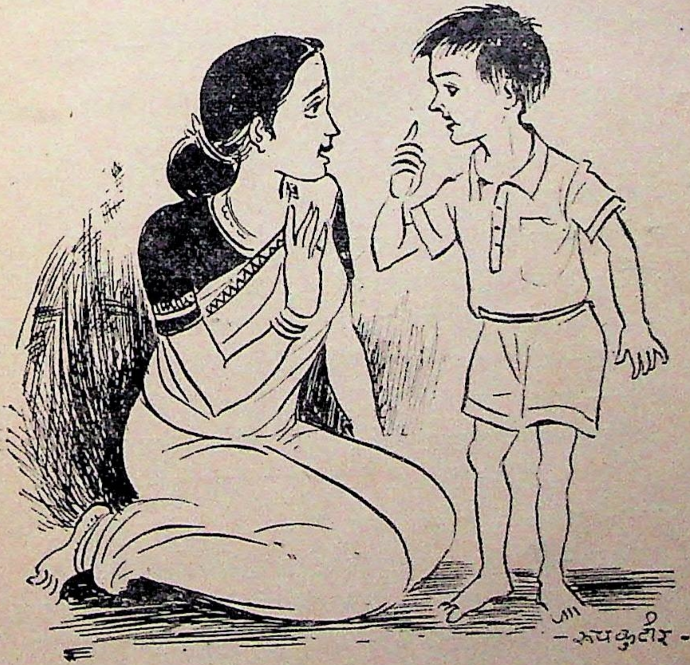

'भंगी किसे कहते हैं, माँ ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

माता—जो मैला उठाये, वही भंगी है।

बच्चा—तो, माँ, तुम भी भंगी हो। मुझे मत छुओ।

माता—(हँसते हुए) यह कैसे हो सकता है, मुन्ना? मैला उठाते हुए भी, देखो, मैं कैसी साफ़ रहती हूँ।

बच्चा—माँ, क्या वह भंगी ऐसा साफ़ नहीं रह सकता?

माता—हाँ, रह सकता है। तबभी हम उसे छू नहीं सकते।

बच्चा—क्यों, माँ? बात समझ में नहीं आई।

माता—जाओ, खेलो, दुनियाभर के सवाल पूछ-पूछकर माथापच्ची न किया करो।

—गिजूभाई

मैं तो छुऊँगी!

बालिका—माँ, भंगिन को छूने में तुम डरती क्यों हो?

माता—मैं अपवित्र हो जाऊँगी।

बालिका—पर मैंने तो उसे कल छुआ था। मैं कहाँ अपवित्र हुई, माँ?

माता—(डरकर) ऐं! अपवित्र नहीं हुई! अरी कमबख्त लड़की! मत छू मुझे। जा, अभी नहा।

बालिका—माँ 'अपवित्र होना' क्या चीज़ है?

माता—सवाल न पूछाकर। वहीं दूर रह, मेरे पास न आ।

बालिका—जब तुम नाराज़ होती हो, तभी गाली देने लगती हो। पर यह तो बताओ माँ, कि 'अपवित्र होना' कहते किसे हैं?

माता—पगली! तू तो निरी बेवकूफ़ है!

बालिका—माँ, मुझे बताओ न, कि भंगिन को मैं क्यों नहीं छुऊँ? उसे छूकर हम क्यों अपवित्र हो जाते हैं? अगर ठीक-ठीक न बताओगी, तो मैं तो उसे फिर छुऊँगी, और फिर छुऊँगी।

—गिजूभाई

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कृतघ्न

माता बच्चे को नहलाती है, धुलाती है और हमेशा साफ़ रखती हैं। बच्चे के लिए माता बड़ी अच्छी है। इसीसे बच्चा अपनी माता से प्रेम करता है।

डाक्टर रोगी के घावों को धोकर उनकी मरहम-पट्टी करता है और रोगी डाक्टर का कृतज्ञ हो जाता है।

भंगी रोज़ सवेरे आकर हमारी सड़कें और टट्टियाँ साफ़ करता है।

भंगी के प्रति कृतज्ञता और प्रेम का बर्ताव करने के बजाय हम उससे कहते हैं--तू 'अछूत' है।

ईश्वर अवश्य इस बात पर हमपर नाराज़ रहता होगा। कृतघ्न लोगों को वह कभी पसन्द नहीं करता।

—गिजूभाई

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"सुसमाचार"

"अन्त्यजों, दीये जलाओ आज घर-घर अपनी-अपनी बस्ती में, और दीवाली का महोत्सव मनाओ।"

"महाराज, दीवाली आज यह कैसी?"

"क्योंकि हमने आज एक सुसमाचार पढ़ा है—'तुम लोग आजसे अस्पृश्य नहीं रहे।'

तुम लोग आजसे अस्पृश्य नहीं रहे।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"अस्पृश्य नहीं रहे हम लोग ! सो कैसे महाराज ?"

"क्योंकि युग-युग से बन्द वज्र-फाटक खुल गये हैं, तुम्हारी काली-काली दीवारों की लौह-खिड़कियाँ टूट गई हैं। आओ, बाहर निकल आओ फाटकों से और खिड़कियों से भी।"

"महाराज, क्या भूस्वामी और भू-देवता हमें छुएँगे ? और जहाँ-जहाँ हम आजतक नहीं पहुँच पाये, वहाँतक अपने इन भग्न पैरों से हम पहुँचेंगे कैसे ? हमारी अँगुलियाँ भी टूटी हुई हैं ; हम कैसे किस वस्तु का स्पर्श कर पायेंगे ?"

"अन्त्यजो, इस सुसमाचार को किसीसे पढ़वा लेना, हम और कुछ नहीं जानते।"

—२—

अन्तरिक्ष से अब उन लुंज-पुंज मुक्त मानव-प्राणियों पर देवताओं के उपदेश और आदेश उतरने लगे—

'स्वच्छता और सभ्यता से रहना सीखो।'

वे सीखें, लो, स्वच्छता से रहना, जिनके पुराने टीन और चीथड़ों से छाये झोंपड़े, खुली गंदी गटरों के किनारे खड़े घृणा का अट्टहास कर रहे थे, जहाँ एक ओर तो बमपुलिस थी और वहींपर नगरभर के मल-मूत्र का डलाव, और दूसरे किनारे हड्डियों का ढेर, जिसपर कुत्ते, कौवे और गृद्ध क्रीड़ा कर रहे थे, जहाँ पीने के लिए भी स्वच्छ पानी नहीं था ! और स्वच्छता को अंगीकार करने की यह आकाश-वाणी आज वहींपर उतरी थी !

फिर दूसरा एक और आदेश-उपदेश आकाश से उतरा—

'कहीं' देखो, अपने-अपने नियत कर्त्तव्य-कर्मों को न छोड़ बैठना तुम लोग।

उन कर्त्तव्य-कर्मों को, जिनपर कि घृणा की काली छाप छाप दी थी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उन भू-देवताओं ने, जो अपने-अपने नियत कर्त्तव्य-कर्मों को स्वयं ही कभी के छोड़ चुके थे !

—३—

सो, उस सुसमाचार को उन्होंने पढ़वा लिया और अपने भग्न पैरों और भग्न हाथों से रेंगते हुए अभुक्तपूर्व का उपभोग करने के लिए वे अपनी-अपनी बस्तियों से चल पड़े।

सबसे पहले वे एक विशाल कूप पर पहुँचे अपने-अपने घड़े ले-लेकर, और उनका वहाँपर नानाविध स्वागत हुआ। उदार कूप-स्वामियों का एक नौकर स्वयं पानी खींच-खींचकर उनके घड़ों में डालने को तैयार खड़ा था। उनके लिए विशेष गिरारी भी लगवा दी गई थी। पर उन बुद्धिहीनों ने इस महान् अनुग्रह का अर्थ न समझकर अपने ही घड़ों से पानी खींचा और उस अपूर्व उपभोग से उनका रोम-रोम पुलकित हो उठा।

दूसरे दिन वे फिर उसी कूएँ पर जा चढ़े अपने हर्षोल्लास को समेटकर-

किन्तु झाँककर देखा, तो विष्ठा-ही-विष्ठा पनघट पर छितरा पड़ा था और कूप के जल पर भी वह उतरा रहा था।

वे फिर अपने उसी सड़े पोखरे का पानी भर-भरकर पीने लगे।

और एक दिन वे एक उपाहारगृह में पहुँचे।

खास ग्राहक थे वे उस दिन उपाहारगृह के और उनका सम्मान भी विशेष ही हुआ। साधारण पात्रों में उन्हें पेय और भोज्य नहीं परोसे गये, क्योंकि वे धातु-पात्र सार्वजनिक उपभोग से जूठे हो चुके थे।

अन्त्यजों को हरे-हरे पत्तों और मिट्टी के सौंधे पात्रों में भोज्य और पेय आदरपूर्वक परोसे गये। गृह में उनके लिए एक अलग विशिष्ट स्थान भी नियत कर दिया गया था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर वे दो-तीन विशिष्ट ग्राहक भूल से अतिसम्मान को भंग करके साधारण ग्राहकों की पंक्ति में जा बैठे। उपाहार-गृह के नौकरों ने उसी क्षण उनकी भूल को सुधार दिया पाद-प्रहारों से।

उन बलहीन नये ग्राहकोंने उपाहारगृह का सम्मान सँभालने में अपनेको असमर्थ पाया।

सुसमाचार को फिर से उन्होंने ध्यान से पढ़वाया, और नहा-धोकर एक दिन एक देवालय के सिंहद्वार पर दर्शन-पूजन के लिए वे जा पहुँचे।

द्वार पर उन्होंने कुछ पंक्तियाँ लिखी देखीं। एक भक्त ने उन्हें वह शिला-लेख पढ़कर सुना दिया, यह कि—

'जो अमोघ फल द्विजातियों को देव-प्रतिमा के दर्शन-पूजन से मिलता है, वही फल बिना श्रम के अन्त्यज केवल मन्दिर के शिखर दर्शन से पा जाता है।'

शास्त्रकारों के इस अद्भुत अनुग्रह का अर्थ वे समझे नहीं। कई दर्शनार्थी कुछ तो भय से, और कुछ उपेक्षा से मन्दिर के द्वार पर से लौट गये। पर दो-तीन दर्शनार्थी भीतर प्रतिमा के सामने हाथ जोड़कर जा खड़े हुए।

गर्भगृह ही नहीं, भीतर-बाहर सारा देव-मंदिर सैकड़ों घड़ों से पुजारियों को धोना पड़ा।

किन्तु प्रतिमा में से तो देवता के प्राण तो निकल ही चुके थे अन्त्यजों की उपस्थिति से।

वे दर्शनार्थी देवालय में फिर दोबारा नहीं गये।

—४—

सुसमाचार का एक भी अक्षर अर्थहीन नहीं था। वह उसी राज-घोषणा का समाचार था, जिसे विधान के धुरंधरों ने तैयार किया था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रश्न था, तब फिर ऐसा क्यों हुआ ?

क्योंकि अखबार पढ़नेवाला प्रचारक समाचार केवल सुनाकर उसी क्षण वहाँ से चल दिया। घोषणा के ऊँचे महल को बालू के ढेर पर रखकर वह चला गया था। उसने सुदृढ़ वातावरण निर्माण करने का श्रम नहीं किया था।

उसे अब अपनी भूल का पता चला। और तप और प्रेम की सँकड़ी गली से उन सबके अंतर में उसने प्रवेश किया, जिन्होंने कुएँ का, और उपाहारगृह का, और मंदिर का ग़लत अर्थ लगा लिया था!

हृदय आज उनके पलट गये; अंतर के पट खुल गये। कूप के अंदर अमृत झरने लगा। उपाहारगृह से सुगंध फूट पड़ी। और मंदिर की पाषाण-प्रतिमा से देव प्रकट हो गया।

और राज-घोषणा का एक-एक स्वर्णाक्षर चमक उठा।

—वि० ह०

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हमारा प्रचार-साहित्य

१.	सन्ध्या-आरती	—एक आना
२.	होटल	—एक आना
३.	मोहना	—एक आना
४.	मन्दिर के द्वार पर	—दो पैसे
५.	बाबा विश्वनाथ डोम-बस्ती में	—दो पैसे
६.	कुठाराघात—छुआछूत और जाति-पाँति पर	—दो पैसे
७.	दससूत्री कार्यक्रम	—दो पैसे
८.	अस्पृश्यता-एक महापाप	—एक आना
९.	जाति नहीं, पानी माँगा है	—एक आना
१०.	मानवता	—एक आना
११.	प्रभात-फेरी के गीत	—दो पैसे
१२.	तीन पीढ़ियाँ	—डेढ़ आना
१३.	लोक गीत	—एक आना
१४.	मंदिर-प्रवेश	—एक आना

पोस्टर

१.	दूर से पानी डाला जा रहा है	—१२रुपये के १००
२.	कुएँ ही नहीं, हृदय भी खोल दिये	,, ,,
३.	श्री राम शबरी	,, ,,
४.	परन्तु देव-दर्शन थीं हरिजनों से !	,, ,,
५.	अगला जन्म भंगी के घर में हो	,, ,,
६.	हरिजनों, इस कारागार से छुड़ाओ	,, ,,

"हरिजन-सेवा"—हरिजन-सेवक-संघ की द्विमासिक मुख-पत्रिका—वार्षिक मूल्य ३) रुपये

प्रकाशक—हरिजन-सेवक-संघ, दिल्ली
मुद्रक—वियोगी हरि, उद्योगशाला प्रेस, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE